R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य-4 रुपये, वर्ष-21, अङ्क-12 दिसम्बर 2021

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

वैराग्य विशेषांक

तीर्थधाम मङ्गलायतन के शीर्ष आधारस्तम्भ

श्री पवन जैन

श्रद्धांजलि सभा

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-21, अङ्क-12 (वी.नि.सं. 2548; वि.सं. 2078) दिसम्बर 2021

मोहे भावे न भैया...

मोहे भावे न भैया थारो देश, रहूँगा मैं तो निज-घर में॥ टेक॥

मोहे न भावे यह महल अटारी,
झूँठी लागे मोहे दुनिया सारी;
मोहे भावे नगन सुभेष,
रहूँगा मैं तो निज-घर में ॥1 ॥

हमें यहाँ अच्छा नहीं लगता,
यहाँ हमारा कोई न दिखता;
मोहे लागे यहाँ परदेश,
रहूँगा मैं तो निज-घर में ॥2 ॥

श्रद्धा ज्ञान चारित्र निवासा,
अनन्त गुण परिवार हमारा;
मैं तो जाऊँगा सुख के धाम,
रहूँगा मैं तो निज-घर में ॥3 ॥

कब पाऊँगा निज में थिरता,
मैं तो उसके लिए तरसता;
मैं तो धारूँ दिगम्बर भेष,
रहूँगा मैं तो निज-घर में ॥4 ॥

साभार : मङ्गल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़

सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सह सम्पादक
पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल
ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार
डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, अलीगढ़

अङ्क के प्रकाशन में सहयोग
श्रीमती जिनेन्द्रमाला
धर्मपत्नी स्व. श्री हेमचन्द जैन
हस्ते श्रीमती पूनम देवेन्द्र जैन
सहारनपुर (उ.प्र.)

क्या - कहाँ

वैराग्यमयी प्रवचन..... 5
ज्ञाता की अवस्था..... 9
श्रुत परम्परा एवं..... 20
विद्वान परिचय शृंखला 23
जिस प्रकार-उसी प्रकार 25
प्रेरक-प्रसंग 26
समाचार-दर्शन 27

शुल्क :
वार्षिक : 50.00 रुपये
एक प्रति : 04.00 रुपये

श्रीमद् राजचन्द्र द्वारा रचित 'अपूर्व अवसर' पर
पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी का
वैराग्यमयी प्रवचन

उदासीनवृत्ति हो सब परभाव से... अर्थात् सर्व भाव का साक्षी; सर्वत्र अकर्तापन; क्रमबद्धपर्याय का ज्ञाता, पर से उदासीन है। जगत् के सब परभावों से भिन्न होकर स्वसन्मुख होने में प्रयत्नशील रहते हुए ऊँचे भाव में आसीन होना-बैठना, यह सत्यार्थरूप से संसार से अनासक्तदशा है।

सुख की सहेली है अकेली उदासीनता।
अध्यात्म की जननी है यही उदासीनता॥

यह कथन अठारह वर्षीय श्रीमद् द्वारा किया गया है। उदासीनता, अर्थात् मध्यस्थता, समभावदशा; वह अध्यात्म की जननी है क्योंकि उससे शुद्ध आत्मस्वरूप प्रगट होता है। तीर्थङ्कर का पुण्य, इन्द्र-चक्रवर्ती के पुण्य की ऋद्धि, स्वर्ग का सुख - ये सब सांसारिक उपाधिभाव हैं; इसलिए ज्ञानी की सब परभावों से उदासीनवृत्ति है।

जो कुछ पुण्य और पाप (शुभ-अशुभ) वृत्ति, ज्ञान में दिखायी पड़ती है, वह सब मोह की विकारी अवस्था है। उन सब परभावों से ज्ञानी की उपेक्षावृत्ति है। वह दूसरे से राग-द्वेष, सुख-दुःख नहीं मानता। अपनी निर्बलता से राग होता है किन्तु वह उसका स्वामी नहीं होता। ज्ञानी के ज्ञान में संसारभाव (शुभ-अशुभभाव) का आदर नहीं है।

कोई प्रश्न करे कि मुनि होने पर सब कुछ छूट जाता है क्या? क्या संसारी वेष में मुनिभाव नहीं आता या वस्त्रसहित मुनि नहीं हो सकता क्या? क्या त्यागी होने पर ही मुनित्व प्रगट हो सकता है? इन सब शङ्काओं का समाधान इसमें किया गया है।

ध्रुवस्वभाव के आलम्बन के बल से अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान - इन तीन जाति के चतुर्कषायों का त्याग होते ही राग के सब निमित्त सहज ही छूट जाते हैं; इसलिए मुनि के केवल देह रहती है। यह

सम्यग्ज्ञानसहित नग्न दिगम्बर निर्ग्रन्थ मुनिदशा की भावना है। जितना राग छूटे, उतना राग का निमित्त भी छूट जाता है - यह नियम है। मुनिपना, अर्थात् सर्वोत्कृष्ट साधकदशा। जब सातवाँ और छठवाँ गुणस्थान बारम्बार बदलता रहता है, वहाँ महान् पवित्र वीतरागदशा और शान्तमुद्रा होती है। अहो! आत्मा में अनन्त ज्ञान, वीर्य की शक्ति है।

आठ वर्ष के बालक को केवलज्ञान हो जावे और करोड़ वर्ष पूर्व की आयु रहे, तब तक शरीर नग्न रहे और महापुण्यवन्त परम औदारिकशरीर बना रह सकता है - ऐसा प्राकृतिक त्रैकालिक नियम है। मुनि अवस्था में मात्र देह के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं रहता। देह होने पर भी देह के प्रति ममत्व नहीं है। केवली भगवान को देह सम्बन्धी रोग, आहार-निहार, उपसर्ग, क्षुधा-तृषादि अठारह दोष कभी भी नहीं होते।

यह तन केवल संयम हेतु होय जब - ज्ञानियों को संयम के हेतु से, देह को उसकी स्थिति पर्यन्त टिकना है। मुनि को छद्मस्थदशा में राग है, तब तक शरीर के निर्वाह के लिए नग्न शरीर साधक है किन्तु फिर भी शरीर की कुशलता के लिए साधु को ममत्व नहीं होता - यह बात यथास्थान की गयी है; इसलिए मुनित्व की भावना और मुनि का स्वरूप कैसा हो? - यह जानना प्रयोजनभूत है।

देह को उपचार से संयम का उपकरण कहा है। मुनि को एषणासमितिपूर्वक निर्दोष आहार की वृत्ति होती है किन्तु वह इन्द्रिय या विषय-कषाय के पोषण के लिए नहीं होती, अपितु संयम के लिए होती है। संयम में इन्द्रिय-मन (अतीन्द्रिय शान्ति में ठहरनेवालों को) निमित्तरूप होता है। इसका मूलकारण आत्मस्वभाव की आलम्बनरूप स्थिरता है। सहज स्वाभाविक आत्मज्ञान में ठहरना ही आत्मस्वभाव की स्थिरता है।

किसी हेतु से अन्य वस्तु चाहूँ नहीं, - अर्थात् अन्य किसी अपवाद से भी बाह्य वस्त्रादि निमित्त, साधु अवस्था में स्वीकार्य नहीं है, यह इसमें बताया है। इसलिए स्वाभाविक (प्राकृतिक) सिद्धान्त से निश्चित हुआ कि जिसकी आत्मा, स्वयं सहजरूप में वर्तती है - ऐसे साधक के बहिरङ्ग

निमित्तमात्र देह होती है किन्तु मुनि के उसका आश्रय नहीं है।

पूजा-सत्कार के लिए या देह को सुन्दर दिखाने के लिए या अन्य किसी कारणवश भी मुनि अवस्था में वस्त्रादि का ग्रहण नहीं है। जब तक पूर्ण वीतराग स्थिति प्रगट नहीं होती, तब तक अल्प राग होता है; इसलिए निर्दोष आहार लेने की वृत्ति होती है किन्तु उस वृत्ति का स्वामित्व उनके नहीं है। जिनकल्पी या स्थविरकल्पी किसी भी जैन मुनि के वस्त्र नहीं होता।

तन में किञ्चित् भी मूर्छा नहीं होय जब - ऐसी मुनिदशा में अंशमात्र भी देह में आसक्ति या ममता नहीं होती। कोई कहे कि केवलज्ञान होने के बाद आहार होवे तो? - यह बात झूठी है। सातवें गुणस्थान में ध्यान-समाधिदशा है, उसमें आहार की वृत्ति नहीं होती तो उससे ऊँची भूमिका में (सातवें गुणस्थान से आगे के गुणस्थानों में) आहार की वृत्ति कैसे हो?, अर्थात् नहीं ही होती। जिनशासन में / मोक्षमार्ग में मुनि की कैसी दशा हो? - यह यहाँ बताया है।

चारित्रभावना (मनोरथ) द्वारा पुरुषार्थ की प्रगटता होने से गृहस्थपना छोड़कर मुनिपना ग्रहण करने का विकल्प आता है। 16वें-17 वें-18वें तीर्थङ्कर भगवान, चक्रवर्ती पदवीधारक थे। वे भी गृहस्थदशा में भगवती जिनदीक्षा की भावना भाते थे और उस भावना के परिणामस्वरूप संसार छोड़कर मुनित्व अङ्गीकार कर, जङ्गल में नग्न दिगम्बर होकर चल पड़े। जिनकी सोलह हजार देव सेवा करते थे और जिनके बत्तीस हजार मुकुटधारी राजा चँवर करते थे - ऐसे छह खण्ड के अधिपति भी मुनि होकर जङ्गल में चले गये। उनके देह की ममता तो पहले से ही नहीं थी किन्तु कमजोरी से जितना चारित्रमोह का राग रहता है, वे उसके विकल्प को भी तोड़कर दिगम्बर अवस्था में सातवें गुणस्थान (साधक-भूमिका) में प्रवेश करते हैं और उस समय उनके चतुर्थ मनःपर्ययज्ञान प्रगट होता है। वे स्वरूप के साधन से अपने ही अपरिमित आनन्दस्वभाव को देखते हैं; इसलिए धर्मात्मा की देह पर दृष्टि (ममत्वभाव) सहज ही दूर हो जाती है।

वे देह में प्रतिकूलता होने पर भी दु:ख का अनुभव ही नहीं करते।

'यथाजात', अर्थात् जन्म समय जैसा शरीर होता है, वैसे ही शरीर की स्थिति मुनि की साधकदशा में होती है। उस साधकदशा में अट्ठाईस मूलगुण सहज निमित्त होते हैं। वह मुनित्व (निर्ग्रन्थ साधकदशा) हो, तब उनकी मुद्रा गम्भीर, निर्विकारी, वीतराग, शान्त, वैराग्यवन्त और निर्दोष होती है। ऐसे गुणों के भण्डार मुनि का शरीर निर्विकारी नग्न बालक की तरह होता है। मुनि आत्मसमाधिस्थ परम पवित्र ज्ञान में रमण करते हैं।

मुनिराज को छठवें गुणस्थान में आहार लेने का विकल्प होता है। वहाँ आहार लेने की वृत्ति अवश्य है किन्तु मूर्च्छा (मोह) या लोलुपता नहीं है। मुनि, शरीर के राग के लिए नहीं, किन्तु संयम के निर्वाह के लिए एक ही समय आहार-जल हाथ में लेते हैं। आहार करते समय मुनि को आहार का लक्ष्य नहीं, किन्तु पूर्ण कैसे होऊँ? - यही लक्ष्य है। उनकी निरन्तर जागृतदशा है।

पूर्णता की स्थिति कब आवेगी? - इस भावना में ही शुद्धता का अंश निहित है। जिन-आज्ञा और वीतरागदशा का यथार्थ विचार ही यह भावना है, वह शुद्धभावना का कारण है। यदि कारण में कार्य का अंश न हो तो उसे वीतरागदशा का 'साधककारण' संज्ञा नहीं मिल सकती। ऐसी उत्कृष्ट साधकदशा कब हो, ऐसा अपूर्व अवसर कब आवेगा? यही उच्च भावना यहाँ की गयी है।

स्वकाल का अर्थ 'स्वसमय' है। श्री अमृतचन्द्राचार्य ने समयसारग्रन्थ के पहले कलश में 'समय' का अर्थ 'आत्मा' बताया है और उसमें 'सार' जो द्रव्यकर्म-भावकर्म-नोकर्मरहित शुद्धात्मा है, उसे नमस्कार किया है। यहाँ यह भावना की गयी है कि पूर्ण शुद्धअवस्था शीघ्र प्रगट हो।

श्रीमद् राजचन्द्र, सम्यग्दृष्टि और आत्मानुभवी थे; इसलिए मुनित्व की भावना भाते हैं। जैसे, पूर्ण असङ्ग निरावरण आत्मस्वरूप का लक्ष्य किया है, वैसे ही पूर्णता के लक्ष्य से 'परमपद प्राप्ति' का उपाय क्या ? - यह वे विचार करते हैं। यहाँ पूर्ण 'समयसार' साधने की भावना व्यक्त की गयी है।●●

(साभार : वह घड़ी कब आयेगी?)

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के
धारावाही प्रवचन

ज्ञाता की अवस्था

अब चौबीसवें कलश का 25वाँ काव्य कहते हैं–

तीर्थंकर भगवान के शरीरकी स्तुति

जाके देह- द्युतिसौं दसौं दिसा पवित्र भई,
जाके तेज आगैं सब तेजवंत रुके हैं।
जाकौ रूप निरखि थकित महा रूपवंत,
जाकी वपु-वाससौं सुवास और सुके हैं।।
जाकी दिव्यधुनि सुनि श्रवणकौं सुख होत।
जाके तन लच्छन अनेक आइ ढुके हैं।
तेई जिनराज जाके कहे विवहार गुन,
निहचै निरखि सुद्ध चेतनसौं चुके हैं।।25।।

अर्थः- जिसके शरीर की आभा से दशों दिशाएँ पवित्र होती हैं जिसके तेज के आगे सब तेजवान लज्जित होते हैं, जिसका रूप देखकर महारूपवान हार मानते हैं, जिसके शरीर की सुगंध से सर्व सुगन्ध छिप जाती है, जिसकी दिव्यवाणी सुनने से कानों को सुख होता है, जिसके शरीर में अनेक शुभ लक्षण आ बसे हैं; ऐसे तीर्थंकर भगवान हैं। उनके ये गुण व्ववहारनय से कहे हैं, निश्चयनय से देखो तो शुद्ध आत्मा के गुणों से ये देहाश्रित गुण भित्र हैं।।25।।

काव्य – 25 पर प्रवचन

अब शिष्य कहता है कि शास्त्र में तो शरीर की स्तुति के द्वारा भगवान की स्तुति की है; अतः शरीर और आत्मा एक हैं ? जैसे–

'जाके देह द्युति सौं' जैसे केशर जैसी मूल्यवान वस्तु उसके योग्य डिब्बी में रहती है, थैली में नहीं भरी जाती; उसीप्रकार अनन्तगुणों की पूर्ण परिणति को प्राप्त और एक समय में तीनकाल-तीनलोक को जाननेवाले

भगवान जिसमें रहते हैं वह शरीर भी कैसा होता है कि जिसके तेज से दशों दिशायें पवित्र और प्रकाशमान हो जाती हैं। जिसके तेज के समक्ष सूर्य, चन्द्र आदि का तेज भी लज्जित हो जाता है। अहो! परमात्मा के आत्मा की महिमा तो क्या कहना; परन्तु उनका शरीर भी ऐसा तेजमय और सुन्दर होता है।

'जाकौ रूप निरखी चकित महारूपवन्त' – भगवान के अंग-अंग में इतनी कोमलता, इतनी कांति, तेज और सुन्दरता होती है कि जगत के महारूपवान लोग भी चकित हो जाते हैं। इन्द्र, कामदेव आदि रूपवान पुरुष भी हार मानते हैं। इतना तो भगवान के शरीर का पुण्य होता है। उसमें भूख-प्यास लगे अथवा रोग आवे- ऐसे अठारह दोष नहीं होते हैं। जो यह मानते हैं कि भगवान दवा लेते हैं, आहार लेते हैं, वे भगवान के पुण्य को भी नहीं पहचानते हैं।

जहाँ भगवान के चैतन्य में केवलज्ञान का रूप प्रकटा, वहाँ शरीररूपी डिब्बी का रूप भी परमौदारिक, परम पवित्र और सुन्दरता को धारण करता है। **'जाकी वपु-वाससौं सुवास और लुकै हैं'** -जिनके शरीर की सुगन्ध के समीप मंदार, सुपारिजात आदि फूलों की सुगंध छुप जाती है ऐसी तो सुगन्ध होती है।

'जाकी दिव्यध्वनि सुनि श्रवणकौं सुख होत' -सर्वज्ञ भगवान के हम-आप बोलते हैं, वैसी वाणी नहीं होती है। भगवान के तो ॐ ध्वनि होती है। वह ऐसी मीठी-मधुर होती है कि ऐसी वाणी जगत में अन्य किसी की नहीं होती। जो सर्वज्ञ परमेश्वर होते हैं, उनके ही ऐसी वाणी होती है। भगवान के शरीर में कमल, छत्र, ध्वजा आदि एक हजार आठ शुभलक्षण होते हैं। ये सब भगवान के शरीर के गुण व्यवहारनय से कहे हैं। निश्चयनय से देखो तो शुद्ध आत्मा के गुणों से ये देहाश्रित गुण अत्यन्त भिन्न हैं।

तीर्थंकर सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा का स्वरूप ऐसा है कि साधारण मनुष्य भी उसे जान सकता है। जो खाता-पीता है, जिसको रोगादि होते हैं,

वह भगवान नहीं हो सकता है। जो भगवान के व्यवहारगुणों को भी नहीं पहचानता; वह सर्वज्ञ के निश्चय गुणों को तो पहचानता ही नहीं है।

यह 25वाँ काव्य हुआ। अब 26वें काव्य में पण्डित बनारसीदासजी क्या कहते हैं–वह देखते हैं।

जामैं बालपनौ तरुनापौ वृद्धपनौ नाहिं,
आयु–परजंत महारूप महाबल है।
विना ही जतन जाके तनमैं अनेक गुन,
अतिसै–विराजमान काया निर्मल है।।
जैसैं विनु पवन समुद्र अविचलरूप,
तैसैं जाकौ मन अरु आसन अचल है।
ऐसौ जिनराज जयवंत होउ जगतमैं,
जाकी सुभगति महा सुकृतकौ फल है।।26।।

अर्थः– जिसके बालक, तरुण और वृद्धपना नहीं है, जिनका जन्मभर अत्यन्त सुन्दर रूप और अतुल्य बल रहता है, जिनके शरीर में स्वतः स्वभाव ही अनेक गुण व अतिशय विराजते हैं, तथा शरीर अत्यन्त उज्ज्वल है, जिनका मन और आसन पवन के झोकों से रहित समुद्र के समान स्थिर है, वे तीर्थंकर भगवान संसार में जयवन्त होवें, जिनकी शुभभक्ति बड़े भारी पुण्य के उदय से प्राप्त होती है।।26।।

काव्य – 26 पर प्रवचन

सर्वज्ञ परमेश्वर कैसे हैं? जिनको त्रिकाल का ज्ञान और अतीन्द्रिय आनन्द प्रकट हुआ है ऐसे सर्वज्ञ भगवान का शरीर कैसा होता है वह कहते हैं। सर्वज्ञ भगवान को बालक की तरह अज्ञानपना, युवाओं की तरह मदान्धपना और वृद्धों की तरह जीर्णपना नहीं होता। उनके शरीर का रूप एक समान और अतुल बल जीवन पर्यन्त रहता है। आदिनाथ भगवान की आयु चौरासी लाख पूर्व वर्ष की थी। अत्यधिक लम्बा काल था तो भी शरीर की स्थिति में बालकपना या वृद्धावस्था नहीं दिखती थी। शरीर की स्थिति एक समान रहती है।

यह सुनकर शिष्य ऐसा कहता है कि देखो, तुम शरीर की महिमा बताकर ही भगवान की महिमा करते हो न ?नहीं भाई, यह शरीर की ही महिमा है, भगवान के आत्मा की पवित्रता की बात तो कोई अलग ही है। यह तो भगवान के संयोग में रहा हुआ शरीर भी कैसा होता है, उसकी महिमा बताई है कि आयु पर्यन्त महारूप और महा बलवंत शरीर होता है।

'बिना ही जतन जाके तन मैं अनेक गुन'। जिनके शरीर में स्वत: स्वभाव से ही अनेक गुण और अतिशय विराजते हैं, मानो किसी कारीगर ने शरीर की शोभा बनाई हो ऐसी स्वाभाविक रचना है। लावण्यमय और सर्वांग सुन्दर शरीर ही ऐसा होता है कि कपड़े और गहनों के बिना भी शोभायमान होता है। उनके शरीर में चौंतीस प्रकार के तो अतिशय होते हैं। यह सब शिष्य जानता है; इसलिए पूछता है कि शरीर की महिमा से आत्मा की महिमा है ?नहीं भाई ! डिब्बी उत्कृष्ट हो, इससे अन्दर की केसर मूल्यवान हो –ऐसा नहीं है। उसीप्रकार शरीर की सुन्दरता से भगवान के आत्मा की महिमा नहीं है। यहाँ तो मात्र यह बता रहे हैं कि उनके शरीर की स्थिति कैसी होती है !

जैसे पवन की लहर के बिना समुद्र का पानी स्थिर होता है, उसीप्रकार मन और आसन की चंचलता से रहित भगवान का शरीर स्थिर, शान्त, गंभीर..गंभीर होता है। सामान्य बालक भी गंभीर हो तो कैसा शोभता है, तो ये तो भगवान हैं; इनकी गंभीरता की शोभा कैसी होगी ! जिस मनुष्य को बहुत कषाय होती है, उसका शरीर भी कंपायमान होता रहता है, वह स्थिर नहीं बैठ सकता है यह कषाय का लक्षण है। इससे विरुद्ध वीतरागता में शरीर भी शान्त और अचल दिखता है, मानो जगत को पीने बैठा हो; कुछ भी देखने का कौतूहल नहीं रहा ऐसी शरीर की स्थिति दिखती है।

'ऐसों जिनराज जयवन्त होऊ जगत मैं' –ऐसे वीतराग जिनभगवंत जगत में जयवंत हो। ऐसी प्रभु की भक्ति भी कोई महान् पुण्य का उदय होने पर ही प्राप्त होती है।

अब 27 वें पद्य (काव्य) में शिष्य को उत्तर देते हैं।

जिनराज का यथार्थ स्वरूप

जिनपद नांहि शरीरकौ, जिनपद चेतनमाँहि।
जिनवर्नन कछु और है, यह जिनवर्नन नांहि।।27।।

अर्थः- यह (ऊपर कहा हुआ) जिन वर्णन नहीं है, जिन वर्णन इससे निराला है; क्योंकि जिनपद शरीर में नहीं है, चेतियता चेतन में है।।27।।

काव्य - 27 पर प्रवचन

भगवान के शरीर का रूप, अतिशय आदि जैसे ऊपर कहे हैं, वैसे ही होते हैं; परन्तु वह कोई भगवान के आत्मा का स्वरूप नहीं है। 'जिनपद चेतन माहिं' चैतन्य में अखण्ड आनन्द और ज्ञान का सागर उछलता है, वह कोई शरीर की लावण्यता से अथवा एक हजार आठ लक्षणों में अथवा शरीर के तेज में नहीं है। अतः जिनदेव के शरीर के वर्णन में जिन भगवान की आत्मा का वर्णन नहीं आता। पुण्य-पाप रहित वीतरागभाव प्रकट हुआ है, वह आत्मा है। तो भी इतना समझ लेना कि केवली के चाहे जैसा शरीर नहीं होता है; शरीर तो पूर्व में कहा गया, वैसा सुन्दर और परमौदारिक ही होता है। भगवान के रोग नहीं होता है। जिनको अतीन्द्रिय आनन्द का पूर्ण अनुभव हो गया है, उनको क्षुधा, तृषा अथवा रोगादिक नहीं हो सकते हैं।

'जिन वर्नन कछु और है, यह जिनवर्नन नाहिं'

शरीर के वर्णन से जिन का वर्णन कुछ अलग ही है। पुण्य-पाप के विकल्प रहित आत्मा का ऐसा वर्णन नहीं होता। शरीर की सुगंधता आदि तो मुनियों के भी होती है। आगे कहा है कि मुनिराज जीवनभर स्नान नहीं करते, दांत मंजन नहीं करते; तो भी वचन और श्वास में सुगन्ध ही निकलती है। देखो, अभी पूर्ण वीतरागता नहीं हुई है तो भी शरीर में इतनी सुगन्ध है, तो क्या पूर्ण वीतराग के शरीर में नहीं होगी ?मुनिराज के अन्तर में इतनी वीतरागता और आनन्द प्रकट होता है और बाहर में शरीर में भी पवित्रता और सुगन्धादि होते हैं।

इसप्रकार इस पद में कहा कि जिन पद शरीर में नहीं है। चेतयिता तो चेतन में है। जो काम-क्रोधादि को जीतता है, वह जिन है। केवलज्ञान में जो जागती ज्योति प्रगट हुई है, जिसमें एक समय में लोकालोक ज्ञात हो जाता है ऐसा प्रकाशमान है; वह आत्मा है। शरीर के तेज में आत्मा नहीं है।

अब अट्ठाईसवें पद में दृष्टान्त देकर यही बात सिद्ध करेंगे कि शरीर के वर्णन से भगवान के आत्मा का वर्णन नहीं होता। शरीर की स्थिति के और आत्मा की स्थिति के सम्बन्ध नहीं है; परन्तु आत्मा की स्थिति ऊँची हो, तब शरीर की कैसी भी स्थिति हो ऐसा नहीं होता हैं। शरीर की स्थिति भी उसके अनुकूल ही होती है।

नियमसार में कहा है कि-"ज्ञाननिधि को पाकर उसे अकेले भोगना, किसी के साथ वाद-विवाद नहीं करना।" जिसमें मन और विकल्प का संग नहीं है ऐसे असंगतत्त्व के ज्ञान और चारित्र की बात साधारण मनुष्य को नहीं बैठती, अत: विवाद हो जायेगा। इसकी अपेक्षा तू अकेला बैठकर तेरी ज्ञाननिधि को भोग!

पुद्गल और चैतन्य के भिन्न स्वभाव पर दृष्टान्त

ऊंचे ऊंचे गढ़के कंगूरे यौं विराजत हैं,
मानौं नभलोक गीलिवेकौं दांत दीयौ है।
सोहै चहूँऔर उपवनकी सघनताई,
घेरा करि मानौ भूमिलोक घेरि लीयौ है।।
गहिरी गंभीर खाई ताकी उपमा बनाई,
नीचौ करि आनन पताल जल पीयौ है।
ऐसो है नगर यामैं नृपकौ न अंग कोऊ,
यौंही चिदानंदसौं शरीर भिन्न कीयौ है।।28।।

अर्थ:- जिस नगर में बड़े-बड़े ऊँचे किले हैं जिनके कंगूरे ऐसे शोभयमान होते हैं मानो स्वर्गलोक निगल जाने के लिये दांत ही फैलाये हैं, उस नगर के चारों ओर सघन बगीचे इस प्रकार सुशोभित होते हैं मानो

मध्यलोक ही घेर रक्खा है और उस नगर की ऐसी बड़ी गहरी खाइयाँ हैं मानो उन्होंने नीचा मुँह करके पाताल लोक का जल पी लिया है, परन्तु उस नगर से राजा भित्र ही है उसी प्रकार शरीर से आत्मा भित्र है।

भावार्थ:- आत्मा को शरीर से सर्वथा निराला गिनना चाहिये। शरीर के कथन को आत्मा का कथन नहीं समझ जाना चाहिये।।28।।

काव्य - 28 पर प्रवचन

यहाँ इस काव्य में दृष्टान्त देकर यह सिद्ध करते हैं कि शरीर की स्तुति से भगवान की वास्तविक स्तुति नहीं होती है। चेतन और पुद्गल का स्वभाव ही भिन्न है; इसलिए शरीर का वर्णन वस्तुत: आत्मा का वर्णन नहीं है।

जैसे नगर में महाविशाल ऊँचे-ऊँचे किले हैं, जिन पर कंगूरे ऐसे शोभते हैं, मानो स्वर्ण को निगल जाने के लिए दाँत फैलाये हों। इसके द्वारा नगर की शोभा बताने से अन्दर (नगर में) रहनेवाले राजा की शोभा नहीं दिखती है। नगर के चारों ओर सघन बगीचे ऐसे शोभ रहे हैं, मानो मध्यलोक को ही घेर लिया है और नगर में ऐसी गहरी विशाल खाइयाँ हैं कि मानो उन्होंने नीचा मुख करके पाताल-लोक का जल पी लिया है; परन्तु इस नगर से राजा भिन्न ही है। इसीप्रकार शरीर से आत्मा भिन्न है। जैसे नगर की शोभा के वर्णन से राजा की शोभा भिन्न है; उसीप्रकार भगवान के शरीर की सुन्दरता की, दिव्य-ध्वनि की, अतिशयों की जो महिमा बताई उससे भगवान के आत्मा की महिमा नहीं होती। आत्मा तो शरीर से भिन्न ही है।

आशय यह है कि आत्मा को शरीर से सर्वथा भिन्न जानना चाहिए। शरीर के रजकण की एक-एक पर्याय से आत्मा अत्यन्त भिन्न है। अत: शरीर के कथन को आत्मा का कथन नहीं समझना चाहिए।

अब 29 वें पद्य में आत्मा की निश्चय स्तुति का वर्णन करते है-

तीर्थंकर के निश्चय स्वरूप की स्तुति

जामैं लोकालोकके सुभाव प्रतिभासे सब,
जागी ग्यान सकति विमल जैसी आरसी।

दर्सन उद्योत लीयौ अंतराय अंत कीयौ,
गयौ महा मोह भयौ परम महारसी।।
संन्यासी सहज जोगी जोगसौं उदासी जामैं,
प्रकृति पचासी लगि रही जरि छारसी।
सोहै घट मंदिरमैं चेतन प्रगटरूप,
ऐसौ जिनराज ताहि बंदत बनारसी।।29।।

अर्थः- जिन्हें ऐसा ज्ञान जाग्रत हुआ है कि जिसमें दर्पण के समान लोक-अलोक के भाव प्रतिबिंबित होते हैं, जिन्हें केवलदर्शन प्रगट हुआ है, जिनका अंतरायकर्म नष्ट हुआ है, जिन्हें महामोह कर्म के नष्ट होने से परम साधु व महासन्यासी अवस्था प्राप्त हुई है, जो स्वाभाविक योगों को धारण किये हैं तो भी योगों से विरक्त हैं, जिन्हें मात्र पचासी प्रकृतियां जरी जेवरी की भस्म के समान लगी हुई हैं; ऐसे तीर्थंकर देव देहरूप देवालय में स्पष्ट चैतन्यमूर्ति शोभायमान होते हैं, उन्हें पण्डित बनारसीदासजी नमस्कार करते हैं।।29।।

काव्य - 29 पर प्रवचन

देह में रहा होने पर भी आत्मा (देह से) भिन्न है। अतः यहाँ तीर्थंकर भगवान के आत्मा का स्वरूप बताकर स्तुति की है।

जिनको ऐसा ज्ञान जागृत हुआ है कि जिसमें दर्पण की तरह लोकालोक के भाव प्रतिबिम्बित होते हैं ऐसा केवलज्ञान भगवान को प्रकट हुआ है। उनका शरीर तो रोगादि रहित निर्मल है ही; परन्तु आत्मा में ज्ञान की ऐसी ज्योति प्रकट हुई है कि जिसमें कोई भी पदार्थ जानने में अवशेष नहीं रहता। जैसे स्वच्छ दर्पण में समस्त वस्तुयें स्पष्ट झलकती हैं; उसीप्रकार भगवान के ज्ञानरूपी दर्पण में सब स्पष्ट ज्ञात होता है। इसप्रकार ज्ञान से आत्मा का स्वरूप कहा है।

'दर्शन उद्योत लीयौ' -दूसरा दर्शनगुण ऐसा प्रकट हुआ है कि एक समय में तीनकाल-तीनलोक की महासत्ता का अवलोकन होता है।

'अन्तराय अन्त कीयौ' –भगवान ने अन्तराय कर्म का सर्वथा नाश करके अनन्तवीर्य प्रकट कर लिया। अब भगवान के किसीप्रकार का विघ्न नहीं है।

'गयो महामोह भयो परम महारसी' –सर्वज्ञ होने पर मोह का अंश भी नहीं रहता है। महामोह गया और परम आनन्द का महारस प्राप्त हुआ है। भगवान को आहार अथवा पानी लेने की आवश्यकता नहीं है। भगवान तो स्वयं अतीन्द्रिय आनन्द का महारस पीते हैं। महामोह कर्म का नाश होने से भगवान को परमसाधु अथवा महासन्यासी अवस्था प्राप्त हो गई है। जहाँ एक भी विकल्प नहीं रहा –ऐसी अवस्था को परमात्मा अथवा अरिहन्त और जिनराज कहा जाता है।

'सहजयोगी' –जिन्होंने स्वाभाविक योग धारण किया है तो भी जो योगों से विरक्त है। अभी अरिहन्त भगवान सिद्ध नहीं हुए, वहाँ तक योग का कंपन है; तो भी भगवान उदास हैं।

'प्रकृति पचासी लागि रहि जरि छारसी' –अरिहन्त भगवान के ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनीय और अन्तराय ये चार घातिकर्मों की प्रकृति का तो नाश हो गया है; परन्तु आयु, नाम, गोत्र और वेदनीय इन चार अघाति कर्मों की प्रकृतियाँ नाश नहीं हुई हैं। ये सब जली हुई रस्सी की राख के समान लग रही है। जैसे जली हुई रस्सी बाँधने के काम नहीं आती है; उसीप्रकार ये प्रकृतियाँ सत्ता में पड़ी होने पर भी भगवान को कुछ नुकसान नहीं कर सकती। श्रीमद्जी ने भी 'अपूर्व अवसर' में इन कर्मों की बात ली है कि ये जली हुई रस्सीवत है।

'सो है घट मन्दिर में चेतन प्रकटरूप' –अरिहन्त भगवान के शरीर होने पर भी शरीर से अत्यन्त पृथक् आत्मा सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, अनन्त आनन्द और अनन्तवीर्य से प्रकटरूप शोभायमान है।

'एसौ जिनराज ताहिं वन्दत बनारसी' –'वीतराग' यह कोई सम्प्रदाय की वस्तु नहीं है, वस्तु का स्वभाव है। जिन्होंने अज्ञान और राग-द्वेष का अभाव करके सर्वज्ञ और वीतराग दशा प्रकट की है ऐसे अरिहन्तदेव को मैं नमस्कार करता हूँ –ऐसा बनारसीदासजी कहते हैं।

आठ कर्मों की कुल एक सौ अड़तालीस प्रकृतियाँ हैं। उनमें से अरहन्त-केवली भगवान के अभी पिच्चासी कर्म प्रकृतियाँ सत्ता में पड़ी हैं। उनमें एक तो असाता वेदनीय है; परन्तु वह मात्र सत्ता में पड़ी है, उसके उदय से रोगादि होवें ऐसा सर्वज्ञ को नहीं होता है। जो देवगति की प्रकृति है वह भी जली हुई रस्सी के समान पड़ी होती है। औदारिकादि पाँच शरीरों की प्रकृति होती है। पाँच बंधन की प्रकृति होती है। पाँच संघात और छह संस्थान की प्रकृति होती है। अरहन्त के आकार तो एक समचतुरस्र संस्थान का ही होता है; परन्तु सत्ता में अन्य प्रकृतियां भी पड़ी होती हैं। तीन अंग-उपांग की प्रकृतियां होती हैं। छह संहनन में से अरिहन्त के उदय तो एक वज्र वृषभनाराच संहनन का ही होता है, अन्य पाँच प्रकृतियाँ सत्ता में पड़ी होती हैं। यह सब सर्वज्ञ से प्रत्यक्ष सिद्ध हुई बात है। सर्वज्ञ के सिवाय ऐसी बात कहीं नहीं होती। 'जली रस्सीवत्' प्रकृतियाँ पड़ी हैं- ऐसा कहा है। यह भी दिगम्बर की शैली है।

स्पर्श, रस, गंध, वर्ण की भी सभी प्रकृतियाँ भगवान की सत्ता में पड़ी होती हैं। देवगति की आनुपूर्वी प्रकृति भी सत्ता में होती है। अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छवास आदि की प्रकृतियाँ भी होती है। प्रशस्त और अप्रशस्त विहायोगति अर्थात् चलने की गति की प्रकृति भी सत्ता में होती है। शरीर पर्याप्त होने पर भी सत्ता में अपर्याप्तक प्रकृति भी पड़ी होती है। प्रत्येक शरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग प्रकृति भी केवली के सत्ता में होती है। यद्यपि दुर्भग प्रकृति का उदय तो पाँचवे गुणस्थान से ही नहीं होता; परन्तु प्रकृति सत्ता में पड़ी होती है।

यह सब जानकारी करनी पड़ती होगी ?हाँ, सर्वज्ञ कैसे होते हैं, उनका स्वरूप तो यथार्थ जानना चाहिए न ! स्वरूप परिज्ञान बिना तो जिस-तिस को सर्वज्ञ मान लेगा। जो तीनकाल-तीनलोक को जानते हैं, बाह्य से सुन्दर शरीर है; तो भी सत्ता में ऐसी प्रकृतियाँ पड़ी है यह जानना चाहिए।

दुर्भग, अनादेय और अयश:कीर्ति इन तीन प्रकृतियाँ का उदय तो पाँचवे

गुणस्थान से ही नहीं होता; परन्तु ये सत्ता में केवली भगवान के तेरहवें गुणस्थान तक पड़ी होती है; परन्तु ये कुछ कार्य नहीं करती।

सुस्वर, दुस्वर, अनादेय, अयश:कीर्ति और निर्माण प्रकृति सत्ता में पड़ी है। गोत्र की उच्च और नीच दोनों प्रकार की प्रकृतियाँ केवली के सत्ता में पड़ी हैं। वेदनीय की साता और असाता दोनों प्रकृतियाँ केवली के सत्ता में होती है। मनुष्यगति, मनुष्य आयु, पंचेन्द्रिय जाति, प्रायोग्यानुपूर्व, त्रस, बादर, पर्याप्तक, सुभग, आदेय, यश:कीर्ति और तीर्थंकर प्रकृत्ति इसप्रकार कुल मिलाकर पिच्चासी प्रकृतियाँ प्रत्येक केवली के सत्ता में पड़ी होती हैं। किसी केवली के हो और किसी केवली के नहीं हो ऐसा नहीं होता है; प्रत्येक के होती ही है। यदि इन प्रकृतियों का अभाव हो जाए, तब तो वे शरीररहित सिद्ध हो जाते हैं। जहाँ तक अरिहन्तदशा है, वहाँ तक जली हुई रस्सी के समान ये कर्म प्रकृतियाँ सत्ता में पड़ी हैं। भगवान के आत्मा को इनसे कुछ भी नुकसान नहीं होता है।

पण्डित बनारसीदासजी कहते हैं कि ऐसे जिनराज को मैं वंदन करता हूँ। "णमो अरिहंताणं" अर्थात् जिनको अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञानादि चार गुण प्रकट हुए हैं, चार कर्मों का नाश हुआ है और चार अघाति कर्मों की पिच्चासी प्रकृतियाँ सत्ता में पड़ी हैं –ऐसे अरिहन्तदेव को पहिचानकर वंदन करता हूँ।

क्रमशः

बादशाह की आज्ञा

विपरीत मान्यता–मिथ्यात्व यह 'बादशाही' गुणस्थान है। जिस प्रकार बादशाह की आज्ञा का कोई उल्लंघन नहीं करता, उसी प्रकार पर का कर्तृत्त्व मानना सो मिथ्यात्वरूप बादशाह की आज्ञा है; इसलिये पर का हम कर सकते हैं—ऐसी मान्यता का कोई अज्ञानी अस्वीकार नहीं कर सकता। पुण्य से धर्म होता है अर्थात् विकार से आत्मगुण प्रगट होता है—ऐसी विपरीत मान्यता से मोहरूपी भूत ने अज्ञानी जीवों को वश किया है। —समयसार प्रवचन से

साभार : *आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष सात, अंक पाँच*

गतांक से आगे

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

2. पर्यायसमास ज्ञान—जीव की उपयोग शक्ति का कभी विनाश नहीं होता। जिस प्रकार कि मेघ का आवरण होने पर भी सूर्य और चन्द्रमा की प्रभा कुछ अंशों में प्रकट रही आती है, उसी प्रकार श्रुतज्ञान सम्बन्धी ज्ञानावरण कर्म का आवरण होने पर पर्याय नाम का ज्ञान प्रकट रहा आता है। जब यही पर्यायज्ञान पर्याय ज्ञान के अनन्तवें भाग के साथ मिल जाता है, तब वह पर्यायसमास नाम का श्रुतज्ञान कहलाने लगता है।

यह पर्यायसमास ज्ञान अनन्त भागवृद्धि, असंख्य भागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि तथा अनन्त भागहानि, असंख्यात भागहानि एवं संख्यात भागहानि से सहित है। पर्यायज्ञान के ऊपर संख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि और अनन्त गुण वृद्धि के क्रम से वृद्धि होते-होते जब तक अक्षर ज्ञान की पूर्णता होती है, तब तक का ज्ञान पर्यायसमास ज्ञान कहलाता है।

3. अक्षर श्रुतज्ञान—एक अक्षर से जो जघन्य ज्ञान उत्पन्न होता है, उसे अक्षर श्रुतज्ञान कहते हैं।

4. अक्षर समासज्ञान—अक्षर ज्ञान के बाद ऊपर पदज्ञान तक एक-एक अक्षर की वृद्धि होती है। इस वृद्धि प्राप्त ज्ञान को अक्षर समास ज्ञान कहते हैं।

5. पद श्रुतज्ञान—पुनः संख्यात अक्षरों को मिलाकर एक पद नाम का श्रुतज्ञान होता है। इसके तीन भेद हैं:—1. अर्थ पद, 2. प्रमाण पद, 3. मध्यम पद।

अर्थ पद—इनमें एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह और सात अक्षर तक का अर्थपद कहलाता है।

प्रमाण पद—आठ अक्षररूप प्रमाण पद होता है।

मध्यम पद—इसमें सोलह सौ चौंतीस करोड़, तेरासी लाख, सात हजार, आठ सौ अठासी अक्षर होते हैं तथा अंग तथा पूर्व के पदों की संख्या इसी मध्यम पद से होती है।

6. पदसमास श्रुतज्ञान—पद श्रुतज्ञान के आगे संघात श्रुतज्ञान होने तक श्रुतज्ञान के जितने भेद हैं, उस ज्ञान को पदसमास ज्ञान कहते हैं।

एक-एक अक्षर की वृद्धि कर पद समास से लेकर पूर्व समास पर्यन्त समस्त द्वादशांग श्रुत स्थित है।

7. संघात श्रुतज्ञान—एक पद ज्ञान के आगे एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते जब संख्यात हजार पदों की वृद्धि हो जाती है, तब वह संघात ज्ञान होता है। यह ज्ञान चारों गतियों में से एक गति का भी वर्णन कर सकता है।

8. संघात समास श्रुतज्ञान—अक्षरों के द्वारा बढ़ता हुआ जो ज्ञान संघात से लेकर प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान तक हो जाता है। उसको संघात समास श्रुतज्ञान कहते हैं।

9. प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान—संघात समास बढ़ते-बढ़ते जब संख्यात हजार संघातों की वृद्धि हो जाए, तब प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान होता है। इस ज्ञान के द्वारा चारों गतियों के स्वरूप का वर्णन किया जाता है।

10. प्रतिपत्ति समास श्रुतज्ञान—प्रतिपत्ति ज्ञान के आगे जब संख्यात प्रतिपत्ति रूप बढ़ जाता, तब अनुयोग से पहले तक उसको प्रतिपत्ति समास कहते हैं।

11. अनुयोग ज्ञान—प्रतिपत्ति समास से एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते जब संख्यात हजार प्रतिपत्ति की वृद्धि होती है, तब एक अनुयोग श्रुतज्ञान होता है। इस ज्ञान से चौदह मार्गणाओं का स्वरूप जाना जाता है।

12. अनुयोग समास ज्ञान—अनुयोग ज्ञान के आगे और प्राभृत-प्राभृत ज्ञान से पहले जितने ज्ञान के विकल्प हैं, वह सब अनुयोग समास हैं।

13. प्राभृतप्राभृत ज्ञान—अनुयोग ज्ञान के आगे एक-एक अक्षर की वृद्धि होते-होते संख्यात अनुयोग होने पर प्राभृत-प्राभृत ज्ञान हो जाता है।

14. प्राभृतप्राभृत समास ज्ञान—प्राभृतप्राभृत ज्ञान प्राभृत-प्राभृत के आगे और प्राभृत से पहले एक श्रुतज्ञान के जितने विकल्प हैं, उसको प्राभृत-प्राभृत समास ज्ञान कहते हैं।

15. प्राभृतज्ञान—प्राभृतप्राभृत ज्ञान की वृद्धि होते-होते जब चौबीस-चौबीस प्राभृत हो जाते हैं, तब एक प्राभृतज्ञान होता है।

16. प्राभृत समास—प्राभृत से ऊपर और वस्तु से नीचे जो श्रुत के विकल्प हैं, उसे प्राभृत समास कहते हैं।

17. वस्तु श्रुतज्ञान—प्राभृत ज्ञान की वृद्धि होते-होते जब बीस प्राभृत बढ़ जाते हैं, तब वस्तु श्रुतज्ञान होता है।

18. वस्तुसमास श्रुतज्ञान—वस्तु श्रुतज्ञान के ऊपर वृद्धि होते-होते जब दस वस्तु ज्ञान की वृद्धि हो जाए, तब एक अक्षर कम तक ज्ञान के जो विकल्प हैं, उसे वस्तु समास ज्ञान कहते हैं।

19. पूर्व श्रुतज्ञान—पूर्व श्रुतज्ञान के चौदह भेद हैं। वस्तु समास के अनन्तिम भेद में अक्षर मिलाने से उत्पाद पूर्व हो जाता है।

क्रमशः साभार : स्वाध्याय का स्वरूप

साधक के साथी

आज 'मुक्ति-मण्डप' का मांगलिक है। सर्वज्ञ परमात्मा श्री सीमन्धर भगवान के पास श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव गये थे और उनकी साक्षात् दिव्यध्वनि सुनकर जो शास्त्र रचे हैं, उनमें अपूर्व अप्रतिहत भावों को उतारा है। उन भावों की जो प्रतीति करे वह अपनी मोक्षपरिणति को प्राप्त करते हुए बीच में सीमन्धर परमात्मा को उतारता है कि हे परमात्मा! आप पूर्ण परिणति को प्राप्त हुए हैं; और आपको साथ रखकर हम भी साधक से पूर्ण होनेवाले हैं... बीच में विघ्न आनेवाला नहीं है... जिस भाव से साधकदशा में आगे बढ़े हैं, उसी भाव से पूर्ण करनेवाले हैं, उसमें फेर नहीं है - नहीं है - नहीं है.... सीमन्धर भगवान की ॐकार ध्वनि में से कुन्दकुन्द भगवान वस्तु का स्वभाव लेकर आये थे... और... उसी की कुछ प्रसादी यहाँ भव्य मुमुक्षुओं को परोसी जा रही है....

साभार : *आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष सात, अंक पाँच*

विद्वान परिचय शृंखला

पिछले अंकों तक श्रुतधराचार्यों का उपलब्ध परिचय हमें प्राप्त हुआ, उसी अनवरत शृंखला में अध्यात्मपुरोधा विद्वानों एवं कवियों के क्रम में

कविवर राजमल्लजी

राजस्थान के जिन प्रमुख विद्वानों ने आत्म-साधना के अनुरूप साहित्य आराधना को अपना जीवन अर्पित किया है, उनमें कविवर राजमल्लजी का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है। इनका प्रमुख निवास स्थान ढूँढाहढ़ प्रदेश और मातृभाषा ढूँढारी रही है। संस्कृत और प्राकृत भाषा के भी ये उच्चकोटि के विद्वान थे। सरल बोधगम्य भाषा में कविता करना, इनका सहज गुण था। इन द्वारा रचित साहित्य के अवलोकन करने से विदित होता है कि ये स्वयं को इस गुण के कारण 'कवि' पद द्वारा सम्बोधित करना अधिक पसन्द करते थे। कविवर बनारसीदासजी ने इन्हें 'पाँडे' पद द्वारा भी सम्बोधित किया है। जान पड़ता है कि भट्टारकों के कृपा पात्र होने के कारण ये या तो गृहस्थाचार्य विद्वान थे, क्योंकि आगरा के आसपास क्रियाकाण्ड करनेवाले व्यक्ति को आज भी 'पाँडे' कहा जाता है। या फिर अध्ययन-अध्यापन और उपदेश देना ही इनका मुख्य कार्य था। जो कुछ भी हो, थे ये अपने समय के मेधावी विद्वान कवि।

जान पड़ता है कि इनका स्थायी कार्यक्षेत्र वैराट नगर का पार्श्वनाथ जिनालय रहा है। साथ ही कुछ ऐसे भी तथ्य उपलब्ध हुए हैं, जो इस बात के साक्षी हैं कि ये बीच-बीच में आगरा, मथुरा और नागौर आदि नगरों से भी न केवल अपना सम्पर्क बनाये हुए थे, बल्कि उन नगरों में भी आते-जाते रहते थे। इसमें सन्देह नहीं कि ये अति ही उदाराशय परोपकारी विद्वान कवि थे। आत्म-कल्याण के साथ इनके चित्त में जनकल्याण की भावना सतत जागृत रहती थी। एक ओर विशुद्धतर परिणाम और दूसरी ओर समीचीन सर्वोपकारिणी बुद्धि इन दो गुणों का सुमेल इनके बौद्धिक जीवन की सर्वोपरि विशेषता थी। साहित्यिक जगत में यही इनकी सफलता का बीज है।

ये व्याकरण, छन्दशास्त्र, स्याद्वाद विद्या आदि सभी विद्याओं में पारंगत थे। स्याद्वाद और अध्यात्म का तो इन्होंने तलस्पर्शी गहन परिशीलन किया था। भगवान कुन्दकुन्द-रचित समयसार और प्रवचनसार प्रमुख ग्रन्थ इन्हें कण्ठस्थ थे। इन ग्रन्थों में प्रतिपादित अध्यात्मतत्त्व के आधार से जनमानस का निर्माण हो, इस सद्भिप्राय से प्रेरित होकर इन्होंने मारवाड़ और मेवाड़ प्रदेश को अपना प्रमुख कार्यक्षेत्र बनाया था। जहाँ भी ये जाते, सर्वत्र इनका सोत्साह स्वागत होता था। उत्तरकाल में अध्यात्म के चतुर्मुखी प्रचार में इनकी साहित्यिक व अन्य प्रकार की सेवाएँ विशेष कारगर सिद्ध हुईं।

कविवर बनारसीदासजी वि० १७वीं शताब्दी के प्रमुख विद्वान हैं। जान पड़ता है कि कविवर राजमल्लजी ने उनसे कुछ ही काल पूर्व इस वसुधा को अलंकृत किया होगा। अध्यात्मगंगा को प्रवाहित करनेवाले इन दोनों मनीषियों का साक्षात्कार हुआ है ऐसा तो नहीं जान पड़ता, किन्तु इन द्वारा रचित जम्बूस्वामीचरित और कविवर बनारसीदासजी की प्रमुख कृति अर्द्ध कथानक के अवलोकन से यह अवश्य ही ज्ञात होता है कि इनके इहलीला समाप्त करने के पूर्व ही कविवर बनारसीदासजी का जन्म हो चुका था।

इनकी प्रतिभा बहुमुखी थी, इसका संकेत पूर्व में ही कर आये हैं। परिणामस्वरूप इन्होंने जिन ग्रन्थों का प्रणयन किया या टीकाएँ लिखीं वे महत्त्वपूर्ण हैं। उनका पूरा विवरण तो हमें प्राप्त नहीं, फिर भी आपके द्वारा रचित साहित्य में जो संकेत मिलते हैं, उनके अनुसार इन्होंने इन ग्रन्थों की रचना की होगी, ऐसा ज्ञात होता है। विवरण इस प्रकार है —

1. जम्बूस्वामीचरित, 2. पिंगल ग्रन्थ-छन्दोविद्या, 3. लाटीसंहिता, 4. अध्यात्मकमल मार्तण्ड, 5. तत्त्वार्थसूत्र टीका, 6. समयसार कलश बालबोध टीका और 7. पंचाध्यायी। ये उनकी प्रमुख रचनाएँ या टीका ग्रन्थ हैं। यहाँ जो क्रम दिया गया है, सम्भवत: इसी क्रम से इन्होंने जनकल्याण हेतु ये रचनाएं लिपिबद्ध की होंगी।

क्रमश:

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जैसे– विवेकी जीव मलिन पानी में निर्मली डालकर मिट्टी को पानी से अलग करके निर्मल पानी को पीता है।

वैसे– ही ज्ञानी भेद विज्ञान के बल से अपने शुद्ध ध्रुव स्वरूप तरफ लक्ष्य करके पुण्य–पाप के राग से हट कर पर्याय में शुद्धता प्रगट कर आनन्द एवं शांति का सेवन करते है।

जैसे– जल में तेल उपर ही तैरता है।

वैसे– ही आत्मा में राग–द्वेष ऊपर ही ऊपर तैरते है, शुद्ध स्वभाव में वह विकार प्रवेश नहीं करता।

जिस प्रकार– बंद कपाट में बाहर का मनुष्य प्रवेश नहीं कर सकता ।

उसी प्रकार– राग–द्वेष की विकारी अवस्थायें त्रिकाली स्वभाव में प्रवेश नहीं कर सकती है वे तो एक समय की पर्याय में ही उत्पन्न और नष्ट होती रहती है।

जिस प्रकार– रंग–बिरंगे कपड़ों से लिपटी सोने की छड़ वह कोई वस्त्र रूप नहीं होती।

उसी प्रकार– चित्र – विचित्र परमाणुओं के समूह से लिपटा यह चैतन्य आत्मा कोई शरीर रूप हुई नहीं, भिन्न ही है। आत्मा को जहाँ शरीर हीं नहीं वहां पुत्र, मकान आदि कैसे ? ऐसा भेद ज्ञान करना सच्चा विवेक और चतुराई है।

जैसे– चन्द्रकान्त मणि की सफलता कब ? कि, चन्द्रकिरण के स्पर्श से उसमें से अमृत झरे तब।

उसी प्रकार– लक्ष्मी की शोभा कब? कि, सत्पात्र के योग से वह दान में खर्च होवे तब।

जैसे– फल के भार से वृक्ष नीचे–नीचे झुकते जाते है।

वैसे ही– ज्ञानी को सम्पत्ति, विद्या, तप और बल प्राप्त होने पर विशेष कोमल और विनयमान होना चाहिए।

जैसे– सरोवर में अगर मगरमच्छ रहते है तो वे सूक्ष्म जन्तुओं को खा जाते है, रहने नहीं देते।

वैसी ही– जिस मन में क्रोध, मान, माया, लोभ रूपी मगरमच्छ रहते है वो गुणों को प्रगट नहीं होने देते।

क्रमशः संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की

प्रेरक-प्रसंग

बंध-मोक्ष परिणामों से ही

सेठ ने सामायिक करने के पूर्व प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक दीपक जलता रहेगा, तब तक सामायिक करता रहूँगा। सेठ साहब सामायिक करते जा रहे थे कि जब दीपक बुझने को हुआ तो सेठानी ने सोचा - आज सेठ साहब बड़ी देर से सामायिक कर रहे हैं, दीपक बुझने वाला है। चलो, इसमें तेल डाल देवें, जिससे अँधेरा न होने पावे। उसने दीपक में और तेल डाल कर दीपक भर दिया। सेठ साहब अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार सामायिक में निश्चल बैठे रहे।

इसी बीच सेठ साहब को बड़े जोर से प्यास लग आई, किन्तु प्रतिज्ञा के अनुसार जब तक दीपक जलता है, तब तक उठ नहीं सकते थे। प्रतिज्ञा टूटने का भी भय था, किन्तु प्यास इतने जोर से लग रही थी कि उनको पानी का ही ध्यान आ रहा था। उनकी सहिष्णुता समाप्त हो चुकी थी। इतने में दीपक बुझने को हुआ तो सेठानी ने आकर फिर से दीपक में तेल भर दिया। सेठ साहब का कंठ सूखता जा रहा था। उनको पानी ही पानी दिख रहा था। कुछ समय बाद प्यास की तीव्रता के कारण उनके प्राण -पखेरू उड़ गये।

अन्तिम समय जल का ही आर्तध्यान होने से वे मरकर अपने ही मकान के कुएँ में मेंढक हुए।

सेठानी जब भी कुएँ से पानी भरने को जाती तो वह मेंढक उछल कर उसके घड़े पर आकर बैठ जाता। सेठानी उसे भगाने का बहुत प्रयत्न करती, किन्तु वह नहीं भागता। वह प्रति दिन इसी प्रकार करता था। एक दिन एक अवधिज्ञानी मुनिराज से सेठानी ने इस मेंढक के विषय में पूछा तो उन्होंने कहा- यह मेंढक तुम्हारा पूर्व भव का पति है। अत: निश्चित है कि, फल शरीर की जड़ क्रिया का नहीं, भावों का ही मिलता है।

शिक्षा- हमारे भावों का फल ही भविष्य में हमें प्राप्त होनेवाला है; अत: परिणामों की सँभाल करने का यत्न करना चाहिए; साथ ही कोई भी प्रतिज्ञा योग्य गुरु के मार्गदर्शन में ही लेना चाहिए; क्योंकि योग्य गुरु ही, लेनेयोग्य प्रतिज्ञा दे सकते हैं।

समाचार-दर्शन

तीर्थधाम चिदायतन में रत्नत्रय मण्डल विधान सानन्द सम्पन्न

तीर्थधाम चिदायतन : पण्डित रवीन्द्रजी आत्मन द्वारा रचित श्री रत्नत्रय मण्डल विधान का आयोजन दिनांक 14 नवम्बर 2021 को सानन्द सम्पन्न हुआ। विधान के आमन्त्रणकर्ता श्री संजय जैन, मङ्गलार्थी निखिल जैन, मेरठ; ध्वजारोहणकर्ता श्री अरविन्द जैन परिवार, कृष्णानगर, दिल्ली; विधानाचार्य श्री संदीप शास्त्री, दिल्ली; विद्वत्वर्ग डॉ. मनीष शास्त्री, मेरठ; पण्डित ऋषभ शास्त्री, दिल्ली; पण्डित मधुवन शास्त्री, मुजफ्फरनगर। इस अवसर पर दिल्ली, ऋषीकेश, गाजियाबाद, नोएडा, खतौली, मुजफ्फरनगर, सरधना, बड़ौत, छपरोली, शामली, गजरौला इत्यादि अनेक स्थानों से पधारे सैकड़ों साधर्मियों ने उत्साहपूर्वक विधान में भाग लिया।

तीर्थधाम मङ्गलायतन : ख्याति प्राप्त विद्वान पण्डित जे.पी. दोशी द्वारा भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के मङ्गलार्थी छात्रों को आधुनिक प्रोजेक्टर के माध्यम से अत्यन्त सरल सुबोध और अंक विद्या के माध्यम से गुणस्थान विवेचन का सम्पूर्ण सुव्यवस्थित अध्ययन कराया। आपकी पढ़ाने की क्षमता से प्रत्येक मङ्गलार्थी छात्र उत्साहित था। इसी शृंखला में मुम्बई से पधारे शास्त्री विद्वान **पण्डित मंथन गाला** द्वारा भी कर्म प्रकृति एवं जैन भूगोल विषयों पर मङ्गलार्थी छात्रों को कक्षाओं का लाभ मिला।

गुरुदेवश्री का स्मृति दिवस

तीर्थधाम मङ्गलायतन : आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के स्मृति दिवस पर तीर्थधाम मङ्गलायतन में पूजन, डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा रचित समयसार विधान, बाहुबली जिनमन्दिर में सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् पूज्य गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन, पण्डित मंथन गाला का प्रवचनसार शास्त्र पर स्वाध्याय; दोपहर में धवला वांचना बालब्रह्मचारी कल्पनाबेन द्वारा; सायंकालीन जिनेन्द्र भक्ति के पश्चात् पूज्य गुरुदेवश्री के जीवन वृत्तान्त पर मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा गोष्ठी का आयोजन किया गया। जिसकी अध्यक्षता पण्डित मंथन गाला; विशिष्ट अतिथि पण्डित सुधीर शास्त्री; मुख्य अतिथि डॉ. सचिन्द्र जैन। संचालन मङ्गलार्थी कृतिकराज जैन ने किया। इस अवसर पर गुरुदेवश्री को समर्पित भक्तिगीत प्रस्तुत किया गया। अनेक मङ्गलार्थियों द्वारा पूज्य गुरुदेवश्री से प्राप्त तत्त्वज्ञान को कार्यकारी व जीवन में प्रत्येक क्षण स्मरणीय बताया गया। इस अवसर पर श्रीमती आलोकवर्धिनी जैन, श्रीमती अनुभूति जैन, श्री अशोक जैन बजाज, श्री नीरज शर्मा आदि महानुभाव भी उपस्थित थे।

अष्टाह्निका पर्व सानन्द सम्पन्न

गढाकोटा : यहाँ कार्तिक माह की अष्टाह्निका पर्व पर ब्रह्मचारी सतेन्द्रजी मौ पधारे। आपने प्रातः पूजन-विधान (समयसार), पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन, तत्पश्चात् ग्रन्थाधिराज समयसार एवं सायंकाल श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार पर उपस्थित मुमुक्षु समाज को तत्त्वलाभ दिया।

ध्यान गोष्ठी सानन्द सम्पन्न

सागर (मकरोनिया) : समयसार वर्षान्तर्गत वीर निर्वाण के उपलक्ष्य में दिनांक 17 नवम्बर से 21 नवम्बर 2021 ध्यान विषयक ऑनलाईन गोष्ठी अनेक ख्यातिप्राप्त विद्वानों के सानिध्य में सम्पन्न हुई। जिसका आयोजन पण्डित अरुण मोदी, सागर और ई-व्यवस्था पण्डित संजय शास्त्री, सर्वोदय अहिंसा ने की।

आत्मार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

ग्वालियर : कक्षा सातवीं के तत्त्वरूचिवन्त आत्मार्थी छात्रों को लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा हेतु श्री समयसार विद्यानिकेतन आत्मायतन ग्वालियर में प्रवेश हेतु शीघ्र सम्पर्क करें। फार्म भरने की अन्तिम तिथि 15 जनवरी 2022। निर्देशक - पण्डित शुद्धात्म शास्त्री, 9893224022; प्राचार्य- श्रीमती अंजली जैन, 0751-4075035; पण्डित संयम शास्त्री - 9311679663।

चतुर्थ पुस्तक की वाचना 25 अक्टूबर 2021 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम - बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी बहिनों तथा मंगलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होगा।

दोपहर	01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**
रात्रि	07.30 से 08.30 बजे तक	मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय
	08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्च्चारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,
Password - 1008 के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

वैराग्य सभा

तीर्थधाम मङ्गलायतन : तीर्थधाम मङ्गलायतन के प्राणपुंज, तीर्थधाम चिदायतन के स्वप्नदृष्टा, दिगम्बर जैन समाज के आधारस्तम्भ, मुमुक्षु समाज के संरक्षक, पूज्य गुरुदेवश्री के अनन्य भक्त **श्री पवन जैन, अलीगढ़** का तत्त्व मनन-चिन्तन पूर्वक देहपरिवर्तन दिनांक 2 दिसम्बर 2021 को प्रात: 11.56 शान्तपरिणामोंपूर्वक हो गया है।

अचानक आपके देह-परिवर्तन के समाचार से सम्पूर्ण देश-विदेश में स्तब्धता की लहर व्याप्त हुई और सम्पूर्ण क्रियाकर्म आपसे पूर्व में प्राप्त निर्देशों (चरणानुयोग) के अनुसार शीघ्रातिशीघ्र अलीगढ़ स्थित जैन श्मशानगृह पर किये गये। इस वैराग्य प्रसंग पर ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री अजितप्रसाद जैन, पण्डित सचिन जैन, पण्डित सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र जैन, डॉ. योगेश जैन और मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा बारह भावना पाठ, वैराग्य पाठपूर्वक परिवारीजनों को संसार की अनित्यता अशरणता का बोध देते रहे। इस वैराग्य-प्रसंग पर डीपीएस स्कूल परिवार, पावना ग्रुप परिवार, अलीगढ़ के गणमान्य नागरिक, अलीगढ़ सम्भाग के प्रशासनिक अधिकारीगण एवं नेता आदि कार्यकर्ता उपस्थित थे। मुखाग्नि पुत्र श्री स्वप्निल जैन द्वारा दी गयी और सभी ने ढाँढस एवं सहानुभूति व्यक्त की।

वैराग्य सभा - दिनांक 5 दिसम्बर को डीपीएस अलीगढ़ में विशाल वैराग्य सभा का आयोजन किया गया। जिसका प्रारम्भ बारह भावनाओं के पाठ, वैराग्य पाठ द्वारा किया गया। संचालन डॉ. विवेक जैन, छिन्दवाड़ा एवं पण्डित संजय जैन, जेवर ने किया। इस प्रसंग पर विद्वान—पण्डित विमलदादा झांझरी, उज्जैन; पण्डित प्रकाशदादा जैन, ज्योतिषाचार्य, मैनपुरी; डॉ. योगेश जैन, अलीगंज; प्रो. सुदीप जैन, दिल्ली; डॉ.

अरुण बण्ड, जयपुर; पण्डित राकेश शास्त्री, दिल्ली; पण्डित अजित जैन, अलवर; डॉ. गजेन्द्र जैन, भरतपुर; पण्डित ऋषभ शास्त्री, दिल्ली। श्रेष्ठीवर्य—श्री हितेनभाई सेठ, मुम्बई; श्री अक्षयभाई दोशी, मुम्बई; श्री आई.एस. जैन, मुम्बई; श्री अजितप्रसाद जैन, दिल्ली; श्री अजित जैन, वड़ोदरा; श्री परमात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर; श्री अखिल बंसल, जयपुर; श्री मुकेश जैन, करेली; श्री पी.के. रुड़की; श्री चिन्मय जैन, कोटा; श्री नवनीत जैन, श्री अम्बुज जैन, मेरठ; श्री केवीएस कृष्णा, कुलपति, मंगलायतन विश्वविद्यालय; प्रो. (डॉ.) जयन्तीलाल जैन, मंगलायतन विश्वविद्यालय। मेरठ, देहरादून, सहारनपुर, आगरा, बुलन्दशहर, बागपत, खेकड़ा, एटा, सिद्धायतन द्रोणगिरि, जयपुर, दिल्ली आदि मुमुक्षु मण्डलों के ट्रस्टी, अध्यक्ष, कार्यकारी सदस्य आदि उपस्थित थे। इसके अलावा मंगलायतन परिवार, मंगलार्थी छात्र, डीपीएस स्कूल परिवार, पावना ग्रुप परिवार, अलीगढ़ के गणमान्य नागरिक, अलीगढ़ सम्भाग के प्रशासनिक अधिकारीगण एवं नेता आदि कार्यकर्ता उपस्थित थे। पण्डित विमलदादा झांझरी, श्री परमात्म भारिल्ल और अलीगढ़ के श्री ज्ञानेन्द्र जैन ने अपने श्रद्धांजलि शब्दों में श्री स्वप्निल जैन को तीर्थधाम मङ्गलायतन की धर्मध्वजा और और उन्नत शिखर तक ले जाने की पावना प्रेरणा दी। इसी प्रसंग में श्री अजित जैन वड़ोदरा ने यह वैराग्य सभा न होकर 'प्रेरणासभा' का नाम दिया और उन्होंने कहा कि आदरणीय पवनजी भाईसाहब का सम्पूर्ण जीवन प्रेरणामय था और हम सभी को उनके जीवन के प्रत्येक पहलू से अनेकानेक प्रेरणाएँ मिलती हैं। जैसे - देव-शास्त्र-गुरु के प्रति विनय, लगनशीलता, तत्त्वचिन्तन, समयप्रबद्धता, कर्मठता, परोपकार, वात्सल्यता, दूरदर्शिता, आदि गुण रश्मियाँ आपके व्यक्तित्व में दिखाई पड़ती हैं, जो हम सभी के लिये अनुकरणीय हैं। अत: वो प्रत्येक व्यक्ति के आदर्श थे।

इसी प्रसंग में चौधरी महेन्द्र गुप्ता, जनकल्याण विभाग, दिल्ली; श्री अतुल गुप्ता, सी.ए.; श्री अजय राजपूत; पण्डित संजय जैन जेवर; मङ्गलार्थी आगम जैन, आईपीएस; मङ्गलार्थी अनुभव जैन, करेली ने भी आदरणीय पवनजी के व्यक्तित्व से प्रभावित अपने संस्मरणों को सभा के समक्ष श्रद्धांजलि के रूप में व्यक्त किया।

इस अवसर पर अनेकानेक संस्थाओं, अधिकारियों, व्यक्तियों के वैराग्य सन्देश भी प्राप्त हुए जिनकी सूची इस प्रकार है —

श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई; श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़; श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थीगृह, सोनगढ़; पण्डित

टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर; श्री कुन्दकुन्द कहान ट्रस्ट, देवलाली; श्री कुंदकुंद कहान शाश्वत् पारमार्थिक ट्रस्ट, संस्कार तीर्थ शाश्वत् धाम; जैन बालिका संस्कार संस्थान; जैन दर्शन कन्या महाविद्यालय, उदयपुर; श्री सिद्धायतन ट्रस्ट, द्रोणगिरि, श्रीमान् विनोदजी डेवडिया; श्री कुंदकुंद कहान दिग.जैन ट्रस्ट, श्री ज्ञानोदय दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, श्री ज्ञानोदय तीर्थधाम, भोपाल; श्री महावीर विद्यानिकेतन, नागपुर; श्री कुन्दकुन्द कहान ट्रस्ट, गजपंथा; श्री आत्मार्थी ट्रस्ट, दिल्ली; श्री बांकानेर दिगम्बर जैन संघ, गुजरात; श्री वीतराग विज्ञान मण्डल, पायल वाला मार्केट, जबलपुर; श्री महावीरस्वामी दिगम्बर जैन मन्दिर, बड़ा फुहारा, जबलपुर; श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन शासन प्रभावना ट्रस्ट, तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन, इन्दौर; श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन धार्मिक एवं पारमार्थिक ट्रस्ट, सिंगोली, जिला नीमच; श्री मुमुक्षु मण्डल, आरोन; श्री सर्वोदय अहिंसा ट्रस्ट, जयपुर; पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद, जयपुर; समयसार परिचर्चा मण्डल, डॉ. राकेश जैन, नागपुर; श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय ट्रस्ट, कोलकाता; श्री शान्तिनाथ कुन्दकुन्द कहान ट्रस्ट, गौरझामर; श्री महावीर कुन्दकुन्द कहान ट्रस्ट, गढ़ाकोटा; श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल, छिन्दवाड़ा; शुगन सी. जैन, इंटरनेशनल स्कूल फॉर जैन स्टडीज, पुणे; श्री जिनदेशना ट्रस्ट, पण्डित विराग शास्त्री, जबलपुर; मुमुक्षु मण्डल करेली; श्री वीतराग विज्ञान स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, अजमेर; मङ्गलायतन विश्वविद्यालय, अलीगढ़; तीर्थधाम चिदायतन, हस्तिनापुर; डीपीएस परिवार अलीगढ़; श्री पार्श्वनाथ गुरुकुल, खुरई, मध्यप्रदेश; जैनिज्म थिंकर, दिलशाद गार्डन, नीरज जैन, दिल्ली; श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल, देहरादून से प्राप्त वैराग्य संदेश; खनियाधाना मुमुक्षु मण्डल से प्राप्त वैराग्य संदेश; श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट, शाहदरा, दिल्ली; सकल दिग. जैन समाज, खडेरी; दैनिक लालसा, हाथरस आदि।

जिनके वैराग्य सन्देश प्राप्त हुए –

सम्माननीय विद्वान् एवं विशिष्ट जन

ब्रह्मचारी सुमतप्रकाश जैन, पण्डित सुभाष सेठ, बांकानेर; पण्डित बाबूभाई मेहता, फतेपुर; पंडित देवेन्द्रकुमार जैन, बिजौलियां; डॉ. संजीव गोधा, जयपुर; ब्रह्मचारी हेमचन्दजी हेम; प्रदीप कुमार चौधरी, अरहन्त चौधरी, किशनगढ़; श्री प्रेमचन्द जैन बजाज, पंडित धर्मेन्द्र शास्त्री, एवं मुमुक्षु आश्रम परिवार कोटा; प्रो.

अनेकान्त जैन, नई दिल्ली; प्रो. अभयकुमार जैन, उत्तर प्रदेश संस्कृति विभाग, जैन विद्या शोध संस्थान, लखनऊ, उत्तर प्रदेश; श्री राजकुमारीजी, सनावद; पण्डित अरहन्तप्रकाश झांझरी, उज्जैन; पण्डित विक्रान्त पाटनी, झालरापाटन; पण्डित मंथनजी गाला, मुम्बई; पण्डित दीपक शास्त्री, ध्रुव, नन्दीश्वर विद्यालय, खनियाधाना; पण्डित अमित अरिहंत, मडावरा; श्री विजय जैन, अहमदाबाद; श्री राजकुमारजी अजमेरा; श्री अभयकुमारजी, इटारसी, मंगलार्थी अमन जैन; श्री रोमेशजी विलासपुर, मंगलार्थी सहज; श्री सुनीलजी सर्राफ, सागर; मंगलार्थी अंकित, अंकुर, आदर्श, धर्मेश जैन एवं मुमुक्षु मण्डल आरोन; आर.एम.डब्ल्यू. परिवार, अलीगढ़; डॉ. टी.सी. जैन, भरतपुर परिवार; श्री दर्शनलाल जैन, देहरादून।

विदेश से - श्री अयान जैन, मेलबर्न दिगम्बर जैन समाज, ऑस्ट्रेलिया; पण्डित नीतेश शास्त्री, दुबई; श्रीमती शीतल वी. शाह, लन्दन आदि के भी वैराग्य सन्देश प्राप्त हुए।

आपने देहपरिवर्तन से पूर्व ही देश-विदेश की अनेकानेक धार्मिक संस्थाओं, दिगम्बर जैन मन्दिरों को दानस्वरूप लगभग 21 लाख रुपये की घोषणा की थी। जिसका क्रियान्वयन आपके परिवारीजनों द्वारा किया गया।

आपके कार्यों से अनेकानेक मुमुक्षु संस्थाएँ संरक्षित थीं। अतः आपके देहपरिवर्तन के समाचार से आपको श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर, तीर्थधाम ज्ञानोदय भोपाल, शाश्वत्धाम उदयपुर, जबलपुर, श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन मण्डल, करेली आदि संस्थाओं ने श्रद्धांजलि सभा का आयोजन स्थानीय स्तर पर किया।

सरदारशहर : श्री अभयकरणजी सेठिया का देहपरिवर्तन शान्तपरिणामोंपूर्वक हो गया है। आप धार्मिक तत्त्वरूचिवन्त, व्यापारिक व्यामोह से दूर स्वाध्याय, भक्ति, चिन्तन, मनन एवं धार्मिक कार्यों में संलग्न थे। आप निरन्तर तत्त्वचर्चा में निमग्न आत्मार्थी मुमुक्षु थे। इस वैराग्य प्रसंग पर परिजनों द्वारा तीर्थधाम मङ्गलायतन को 11,000/- की राशि दानस्वरूप प्रदान की गयी।

गोरमी (भिण्ड) : श्रीमती सुनीताजी का देहपरिवर्तन शान्तपरिणामोंपूर्वक हो गया है। आप स्नातक पण्डित चेतन शास्त्री की माताजी थीं। आप धार्मिक तत्त्वरूचिवन्त एवं धार्मिक कार्यों में संलग्न थीं।

दिवंगत आत्माएँ शीघ्र ही मोक्षमार्ग प्रशस्त कर अभ्युदय को प्राप्त हो—ऐसी भावना मङ्गलायतन परिवार व्यक्त करता है।

तीर्थधाम मंगलायतन से प्रकाशित एवं उपलब्ध साहित्य सूची

मूल ग्रन्थ–

1. समयसार वचनिका
2. प्रवचनसार (हिन्दी, अंग्रेजी)
3. नियमसार
4. इष्टोपदेश
5. समाधितंत्र
6. छहढाला (हिन्दी, अंग्रेजी सचित्र)
7. मोक्षमार्ग प्रकाशक
8. समयसार कलश
9. अध्यात्म पंच संग्रह
10. परम अध्यात्म तरंगिणी
11. तत्त्वज्ञान तरंगिणी
12. हरिवंशपुराण वचनिका
13. सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन

1. प्रवचनरत्न चिन्तामणि
2. मोक्षमार्गप्रकाशक प्रवचन
3. प्रवचन नवनीत
4. वृहद्द्रव्य संग्रह प्रवचन
5. आत्मसिद्धि पर प्रवचन
6. प्रवचनसुधा
7. समयसार नाटक पर प्रवचन
8. अष्टपाहुड़ प्रवचन
9. विषापहार प्रवचन
10. भक्तामर रहस्य
11. आतम के हित पंथ लाग!
12. स्वतंत्रता की घोषणा
13. पंचकल्याणक प्रवचन
14. मंगल महोत्सव प्रवचन
15. कार्तिकेयानुप्रेक्षा प्रवचन
16. छहढ़ाला प्रवचन
17. पंचकल्याणक क्या, क्यों, कैसे?
18. देखो जी आदीश्वरस्वामी
19. भेदविज्ञानसार
20. दीपावली प्रवचन
21. समयसार सिद्धि
22. आध्यात्मिक सोपान
23. अमृत प्रवचन
24. स्वानुभूति दर्शन
25. साध्य सिद्धि का अचलित मार्ग

पण्डित कैलाशचन्द्रजी का साहित्य

1. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला (भाग 1 से 7) (हिन्दी गुजराती)
2. मंगल समर्पण

अन्य

1. फोटो फ्रेम (पूज्य गुरुदेवश्री, बहिनश्री)

2. सी.डी.

3. मंगल भक्ति सुमन
4. मंगल उपासना
5. करणानुयोग प्रवेशिका
6. धन्य मुनिदशा
7. धन्य मुनिराज हमारे हैं!
8. प्रवचनसार अनुशीलन

बाल साहित्य (कॉमिक्स)

1. कामदेव प्रद्युम्न
2. बलिदान

आद. पवनजी की स्मृति में उपरोक्त साहित्य सभी मन्दिरों, ट्रस्ट, संस्थानों, विद्यालयों, पुस्तकालयों और साधर्मी भाई–बहिनों को स्वाध्यायार्थ निःशुल्क दिया जायेगा। सम्पर्क – सम्पर्कसूत्र – पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, 7581060200

Email : info@mangalayatan.com

– डाकखर्च आपका रहेगा।

चिदायतन सहयोग

- परम शिरोमणी संरक्षक — रुपये 11.00 लाख
- शिरोमणी संरक्षक — रुपये 05.00 लाख
- परम संरक्षक — रुपये 02.00 लाख 51.00 हजार
- संरक्षक — रुपये 01.00 लाख

तीर्थधाम चिदायतन संकुल में 206096.26 वर्ग फीट का निर्माण प्रस्तावित है। देव-शास्त्र-गुरु की उत्कृष्ट धर्मप्रभावना हेतु निर्मित हो रहे इस संकुल के निर्माण में आप एवं आपका परिवार, रुपये 2100.00 प्रति वर्ग फीट की सहयोग राशि प्रदान कर, तीर्थ निर्माण के सर्वोत्कृष्ट कार्य में सहभागी हो सकते हैं।

दानराशि में आयकर की छूट

भारत सरकार ने, श्री शान्तिनाथ-अकम्पन-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट को दान में दी जानेवाली प्रत्येक राशि पर, आयकर अधिनियम वर्ष 1961, 12-ए के अन्तर्गत धारा 80 जी द्वारा छूट प्रदान की गयी है।

नोट - आप अपनी राशि सीधे बैंक में जमा करा सकते हैं, अथवा निम्न नाम से Cheq./Draft भेज सकते हैं।

NAME	:	SHRI SHANTINATH AKAMPAN KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	PARIYAVALI, ALIGARH
A/C. NO.	:	7969002100000194
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0796900

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

ऐसे मुनिराज दुर्लभ हैं

मुनिजन अन्तरङ्ग में किञ्चित् भी छिपाये बिना, सरलता से पात्र जीवों को सर्व रहस्य का उपदेश करते हैं। उपदेश के विकल्प को भी वे अपना नहीं मानते। जिनको शरीर और विकल्प का ममत्व नहीं है तथा जो आहार एवं उपदेशादि के विकल्प को तोड़कर वीतरागस्वभाव में स्थित हैं — ऐसे उत्तम आकिञ्चन्यधर्म में रत मुनिगण, इस संसार में धन्य हैं। उनके चारित्रदशा विद्यमान है, केवलज्ञान प्राप्त करने की पूरी तैयारी है। बारह अङ्ग का ज्ञान होने पर भी उसमें आसक्ति नहीं है। किसी समय किञ्चित् उपदेशादि की वृत्ति उठती है, उसे छोड़कर स्वभाव में एकदम सम्पूर्ण स्थिरता द्वारा केवलज्ञान प्रगट करने के अभिलाषी हैं — ऐसे मुनिजन दुर्लभ हैं।

(- दशधर्म प्रवचन, पृष्ठ ९२)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक पवन जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। सम्पादक : डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust

Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22

info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com